International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(6): 22-24

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(6): 22-24
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-09-2019
Accepted: 18-10-2019

डॉ. श्याम बहादुर दीक्षित
एम.ए.,डी.फिल् (संस्कृत), इलाहाबाद विश्वविद्यालय, सहायक अध्यापक सर्वोदय इण्टर कालेज, लम्भुआ, सुलतानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ. श्याम बहादुर दीक्षित
एम.ए.,डी.फिल् (संस्कृत), इलाहाबाद विश्वविद्यालय, सहायक अध्यापक सर्वोदय इण्टर कालेज, लम्भुआ, सुलतानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

महाकवि जयशेखर सूरि की जीवनवृत्त और कृतियाँ

डॉ. श्याम बहादुर दीक्षित

प्रस्तावना

जैनकुमारसम्भव का रचनाकाल एवं महाकवि जयशेखरसूरि के जीवनवृत्त का कोई विश्वस्त प्रमाण उपलब्ध नहीं है। महाकवि ने ग्रन्थ के अन्त में अपने नामोल्लेख के अतिरिक्त अपना कोई विशेष परिचय नहीं दिया है। अन्यान्य संस्कृत ग्रन्थों में आंचलगच्छीय परम्परा का उल्लेख इस प्रकार किया गया है[1]–

1. आर्यरक्षित सूरि (आंचलगच्छ संस्थापक)
2. जयसिंह सूरि
3. धर्मघोष सूरि
4. महेन्द्रसिंह सूरि
5. सिंहप्रभु सूरि
6. अजितसिंह सूरि
7. देवेन्द्रसिंह सूरि
8. धर्मप्रभ सूरि
9. सिंहतिलक सूरि
10. महेन्द्रप्रभ सूरि

(क) मुनिशेखर सूरि (ख) जयशेखर सूरि (ग) मेरुतुङ्ग सूरि

उपर्युक्त नामावली के आधार पर यह निश्चित होता है कि जयशेखर सूरि महेन्द्रप्रभ सूरि के शिष्य थे और मुनिशेखर के पश्चात् तथा मेरुतुङ्ग के पूर्व विद्यमान थे। जैनकुमारसम्भव के प्रत्येक सर्ग की टीका के अन्त में कवि के प्रिय शिष्य धर्मशेखर सूरि ने जयशेखर सूरि की साहित्यिक उपलब्धियों का जो संकेत किया है, उससे विदित होता है कि जयशेखर सूरि काव्य सरिता के 'उद्गम स्थल' तथा 'कविधरा' के मुकुट थे। उनकी कवित्व शक्ति और काव्य कौशल को देखते हुए धर्मशेखर सूरि का यह कथन–

> सूरिः श्री जयशेखरः कविघटा कोटीरहीरच्छविः।
> धर्मिल्लादिमहाकवित्वकल ना कल्लोलिनीसानुमान।।

गुरूशक्ति से उत्प्रेरित श्रद्धांजलि मात्र नहीं है। धम्मिलकुमारचरित की प्रशस्ति में जयशेखर सूरि ने स्वयं 'कविचक्रधर' विशेषण द्वारा अपनी प्रबल कवित्वशक्ति को रेखांकित किया है। धम्मिलकुमारचरित का रचनाकाल संवत् 1462 तक जयशेखर की स्थिति असन्दिग्ध है।[2]

महाकवि जयशेखर सूरि द्वारा उल्लिखित ग्रन्थ

श्री स्तंभतीर्थ श्रीमद्न्चलगच्छनभोमण्डलर्मातण्डेन सकलविद्वतवर्ग मानसचकोर सुधारकरेण यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहाध्र्यानधारणासमाध्यात्मकाण्ठाङ्ग परिकलितात्मना निजप्रतिभाधारी कृतामृताशनासूरिणा भारतीप्रदत्तवरेण प्रबोधचिन्तामणि, उपदेशचिन्तामणि, धम्मिलकुमारचरित सच्छास्त्र प्रणेता प्रातः स्मरणीय नामधेयेन पूज्यपादारविन्दयुगलेन तत्र भवता परमगुरु वर्णेय श्री जयशेखरसूरि विरचितं जैन–कुमारसम्भव महाकाव्यम्।

पूर्वोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि जयशेखर सूरि प्रबोध चिन्तामणि, उपदेशचिन्तामणि, धम्मिलकुमारचरित और जैनकुमारसम्भव की रचना की थी। इनकी रचनाओं की सूची निम्नलिखित है–

1. प्रबोधचिन्तामणि (सं0 1464) जैनधर्म प्रसारक सभा, भावनगर
2. उपदेशचिन्तामणि (सं0 1436) हीरालाल हंसराज, जामनगर
3. धम्मिल्लकुमारचरित (सं0 1462) हीरालाल हंसराज, जामनगर जैनकुमारसम्भव (विक्रम सं0 1483) जैनकुमारसम्भव की प्रशस्ति)

4. गिरिनारगिरिद्वात्रिंशिका
5. महावीरजिनद्वात्रिंशिका
6. धर्मसर्वस्व
7. उपदेशचिन्तामण्यचूरि
8. पुष्पमालावचूरि
9. आत्मावबोधकुलक
10. शत्रुंजय द्वात्रिंशिका
11. उपदेशमालावचूरि
12. क्रियागुप्तस्त्रोत्
13. छन्दशेखर
14. नवतत्त्व कुलक
15. अजितशान्तिस्तव
16. संवोधसप्ततिका
17. नैमिनाथ फागु
18. त्रिभुनदीपक प्रबन्ध

धम्मिलकुमारचरित की प्रशस्ति में जैनकुमारसम्भव के नामोल्लेख से यह निश्चित है कि जैनकुमारसम्भव पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में निर्मित कृति है।[3]

अतएव धर्मसर्वस्व, आत्मकुलक, अजितशान्तिस्तव, संबोधसाप्तिका, नलदमयन्तीचम्पू, न्यायमंजरी तथा द्वात्रिशिकाएं कवि की मौलिक रचनाएं है। त्रिभुवनदीपक प्रबन्ध, परमहंश प्रबन्ध, अन्तरंग चौपाई, प्रबोध चिन्तामणि चौपाई की रचना गुजराती में हुई है।[4]

जैन काव्य साहित्य के निर्माण में मूल प्रेरणाएं

(क) धार्मिक भावना

पूर्व और उत्तर मध्यकाल की राजनीतिक, धार्मिक सामाजिक और साहित्यिक परिस्थितियों तथा लेखन कार्य की सुविधाओं का प्रभाव हमारे आलोच्य युग के जैन काव्य साहित्य पर विशेष रूप से पड़ा। इस साहित्य को देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि जैन काव्यकारों का दृष्टिकोण धार्मिक था। जैन धर्म के आचार और विचारों को रमणीय पद्धति से एवं रोचक शैली से प्रस्तुत कर धार्मिक चेतना और भक्तिभावना को जाग्रत करना उनका मुख्य उद्देश्य था। जैन कवियों ने काव्यों की रचना एक ओर स्वान्तः सुखाय हेतु की है के दूसरी ओर कोमलमति जनसमूह तक जैनधर्म के उपदेशों को पहुँचाने के लिए की है। इसके लिए उन्होंने धर्मकथानुयोग या प्रथमानुयोग का सहारा लिया है। जन सामान्य को सुगम रीति से धार्मिक नियम समझाने के लिए कथात्मक साहित्य से बढ़कर अधिक प्रभावशाली साधन दूसरा नहीं है। उनकी कुछ रचनाओं को छोड़कर अधिकांश कृतियाँ विद्वद्वर्ग के लिए नहीं अपितु सामान्य कोटि के जनसमूह के लिए है। इस कारण से ही उनकी भाषा अधिक सरल रखी गयी जनता को प्रभावित करने के लिए अनेक प्रकार की जीवन घटनाओं पर आधारित कथाओं और उपकथाओं की योजना इन काव्य ग्रन्थों की विशेषता है। इन विद्वानों ने चाहे प्रेमाख्यानक काव्य रचा हो अथवा चरितात्मक, सभी में धार्मिक भावना का प्रदर्शन अवश्य किया है। इस धार्मिक भावना को प्रकट करने में उन्होंने जैनधर्म के जटिल सिद्धान्तों और मुनिधर्म सम्बन्धी नियमों को उतना अधिक व्यक्त नहीं किया है जितना कि ज्ञान दर्शन–चरित्र के सामान्य विवेचन के साथ अहिंसा, सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रहस्वरूप सार्वजनिक व्रतों दान शील तप, भाव, पूजा, स्वाध्याय आदि आचरणीय धर्मों को प्रतिपादित किया है।

(ख) विभिन्न वर्ग के अनुयायियों की प्रेरणा

त्यागी वर्ग–चैत्यवासी, वसतिवासी यति, भट्टारक में क्रिया काण्ड विषयक भेदों को लेकर नये–नये गण–गच्छों का प्रादुर्भाव हुआ। उनके नायकों ने अपने–अपने गण की प्रतिष्ठा से भिन्न–भिन्न क्षेत्रों का विशेष रूप से भ्रमण करना शुरू किया। उन लोगों ने अपने उच्च चारित्र्य पांडित्य तथा ज्योतिष, तंत्र–मंत्रादि से तथा अन्य चमत्कारों से राजवर्ग ओर धनिक वर्ग को अपनी ओर आकर्षित करना प्रारम्भ किया तथा विभिन्न स्थलों पर चैत्य, उपाश्रय आदि धर्मायतनों की स्थापना करने लगे और अपने बढ़ते हुए शिष्य समुदाय की प्रेरणा से तथा अपने आश्रयदाताओं के अनुरोध से व्रत, पर्व, तीर्थादि महात्म्य तथा विशिष्ट पुरुषों के चरित्र वर्णन करने के लिए कथात्मक ग्रन्थों की रचना की ओर विशेष ध्यान दिया। इस युग के अनेक जैन कवियों को या तो राजाश्रय प्राप्त था या वे मठाधीस थे। राष्ट्रकूट अमोधवर्ष और उसके उत्तराधिकारियों के संरक्षण में जिनसेन और गुणभद्र ने महापुराण, उत्तरपुराण की, कुमार पाल के गुरु हेमचन्द्र ने त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित की तथा वस्तुपाल के आश्रय पर पश्चात्कालीन कई आचार्यों ने अनेक प्रकार से काव्य–साहित्य की सेवा की। अनेकों काव्य ग्रन्थों में विभिन्न स्रोतों से प्राप्त प्रेरणाओं का साभार उल्लेख भी मिलता है।

(ग) गच्छीय स्पर्धा

यद्यपि त्यागी वर्ग को राज्य और धनिक वर्ग का आश्रय प्राप्त था तथापि उन्हे धन की इच्छा नहीं थी। उनसे प्राप्त सुविधा का उपयोग वे अपनी गच्छीय प्रतिष्ठा और साहित्य–निर्माण में करते थे। काल की दृष्टि से पांचवी से दशवीं शताब्दी तक काव्यग्रन्थों का निर्माण उतनी तीव्र गति और प्रचुर मात्रा में नहीं हुआ जितनी कि ग्यारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तक। दसवीं शताब्दी के पूर्व यदि कई विशाल एवं प्रतिनिधि रचनाएं लिखी गई थी, तो दसवीं शताब्दी के बाद तीन सौ वर्षों में यह संख्या बढ़कर सैकड़ों के तादाद तक पहुँच गई। जैन विद्वानों में मानों उस समय कथा साहित्य (प्राकृत में कथा और काव्य एक अर्थ में प्रयुक्त हुए है) की रचना करने में परस्पर बड़ी स्पर्धा हो रही थी। अमुक गच्छवाले अमुक विद्वान् ने अमुक नाम का कथाग्रंथ बनाया है यह जानकर या पढ़कर दूसरे गच्छ वाले विद्वान् भी इस प्रकार के दूसरे कथाग्रन्थ बनाने में उत्सुक होते थे। इस रीति से चन्द्रगच्छ, नागेन्द्रगच्छ, राजगच्छ, चैत्रगच्छ, पूर्णतल्लगच्छ, वृद्धगच्छ, धर्मघोषगच्छ, हर्षपुरीयगच्छ आदि विभिन्न गच्छ, जो कि इन शताब्दियों में विशेष प्रसिद्धि पाये थे और प्रभावशाली बने थे। इन प्रत्येक गच्छ के विशिष्ट विद्वानों ने इस प्रकार के कथा ग्रन्थों की रचना करने के लिए सबल प्रयत्न किये। इस युग में एक ही पीढ़ी के विभिन्न गच्छीय दो–दो, तीन–तीन विद्वानों ने तिरसठ शलाका महापुरुषों के चरित्रों तथा व्रत मंत्र, पर्व, तीर्थमहात्म्य प्रसंगों को लेकर एक ही नाम की दो–दो, तीन–तीन रचनाएं लिखीं। लोककथा, नीतिकथा, परीकथा तथा पशु–पक्षी आदि हजारों कथाओं को लेकर इन्होंने विशालकाय कथाकोष ग्रन्थ भी लिखे।

(घ) ऐतिहासिक एवं समसामयिक प्रभावक पुरुष

यद्यपि जैन कवि धनादि भौतिक कामनाओं से परे थे फिर भी कथात्मक साहित्य के अतिरिक्त जैन विद्वानों ने युग की परिणति के अनुकूल ऐतिहासिक और अर्द्ध–ऐतिहासिक कृतियों की रचना की । इन कृतियों में प्रायः ऐसे ही राजवंश या प्रभावक व्यक्ति की प्रशंसा या इतिवृत्ति लिखा गया जिन्होंने जैनधर्म के विकास के लिए अपना तन, मन, और धन सर्वस्व समर्पित कर दिया था। सिद्धराज जयसिंह, परमार्हत कुमारपाल, महामात्म्य वस्तुपाल झगडूशाह और पेथडशाह आदि उदारमना धर्मपरायण व्यक्ति थे जो किसी भी देश, समाज, जाति के लिए प्रतिष्ठा की वस्तु थे। जैन साधुओं ने उनके जैन धर्मानुकूल जीवन से प्रभावित होकर उन्हें अपने काव्यों का नायक बनाया और उनकी प्रशस्तियाँ लिखी। आचार्य हेमचन्द्र ने कुमारपाल के वंश की कीर्ति–गाथा में 'द्वयाश्रयकाव्य' का प्रणयन किया, वालचन्द्रसूरि ने वस्तुपाल के जीवन पर 'वसन्तविकास' एवं उदयप्रभसूरि ने धर्माभ्युदय काव्य की रचना की। इसी तरह प्रभावक आचार्यों और पुरुषों के नाम लघु निबन्धों के रूप में प्रबन्ध संग्रह प्रवन्धचिन्तामणि, प्रभावकचरित आदि लिखने की प्रेरणा मिली। ये कृतियां निकट अतीत या समसामयिक ऐतिहासिक पुरुषों के जीवन पर आधारित होने से तत्कालीन इतिहास जानने के लिए बड़ी ही उपयोगी हैं।[5]

(ङ) धार्मिक उदारता निष्पक्षता एवं सहिष्णुता

साहित्य सेवा के क्षेत्र में जैनाचार्यों की नीति निष्पक्ष तथा धार्मिक उदारता से प्रेरित थी। उन्होंने अनेक कृतियाँ इन भावनाओं से प्रेरित होकर भी लिखी और पढ़ी तथा उनका संरक्षण किया। इस तरह हम देखते हैं कि अमरचन्द्रसूरि ने वायडनिवासी ब्राह्मणों की प्रार्थना पर 'बालभारत' की तथा नयचन्द्रसूरि ने 'हम्मीरमहाकाव्य' की रचना की। माणिक्यचन्द्र ने काव्यप्रकाश पर संकेत टीका लिखी तथा अनेक जैनेतर महाकाव्यों पर जैन विद्वानों ने प्रामाणिक टीकाएँ लिखी तथा अनेक जैनेतर काव्यग्रन्थों–पंचतन्त्र, वेतालपंचविंशतिका, विक्रमचरित, पंचदण्डछत्रप्रबन्ध आदि का प्रणयन किया। इतना ही नहीं, उनकी उदार साहित्य सेवा से प्रभावित हो अन्य धर्म और सम्प्रदाय के लोग उनसे अभिलेख साहित्य का निर्माण कराकर अपने स्थानों में उपयोग करते थे। यथा–चित्तौड़ के मोकलजी–मन्दिर के लिए दिगम्बराचार्य रामकीर्ति (वि0सं0 1207) से प्रशस्ति लिखायी गई थी। इसी तरह राजस्थान की सुन्ध पहाड़ी के चामुण्डा देवी के मन्दिर के लिए वृहदच्छीय जयमंगलसूरि से और ग्वालियर के कच्छवाहों के मन्दिर के लिए यशोदेव दिगम्बर से और गुहिलोत वंश के घाघसा और चिर्वा स्थानों के लिए रत्नप्रभसूरि से शिलालेख लिखाये गये थे।[6]

जैनकवियों की समालोचना

मानव हृदय में अनादि काल से विद्यमान आसुरी वासना के समूल नाश के लिए जैनमहर्षियों ने एक मात्र साहित्य को साधन बनाया है, और धर्म की स्थापना हेतु अपने त्यागी जीवन को लोकहित में समर्पित कर दिया।

काव्य निर्माण की दृष्टि से सामन्तभद्र ने सर्वप्रथम द्वितीय शताब्दी में स्तुतिकाव्य का सृजन किया और जैनों के मध्य संस्कृत भाषा में जैनकाव्य परम्परा का श्रीगणेश किया। अतः स्पष्ट है कि द्वितीय शताब्दी से प्रारम्भ होकर अठ्ठारहवीं शती तक संस्कृत भाषा में जैन काव्य की परम्परा अविराम रूप से चलती रही। संस्कृत काव्य के विकास काल में जैन कवियों ने जितने काव्य–ग्रन्थों का प्रणयन किया है, उससे कई गुने अधिक काव्यों की रचना ह्रासोन्मुख काल में किये गये है, यह उनकी परम् विशेषता है।

इस तरह हम देखते है कि वाण की कादम्बरी की शैली पर धनपाल ने 'तिलकमंजरी' और ओऽयदेव वादीभसिंह ने 'गद्यचिन्तामणि', 'किरातार्जुनीय' और 'शिशुपाल' की शैली पर हरिचन्द्र ने 'धर्मशर्माभ्युदय और मुनिभद्रसूरि ने 'शान्तिनाथ चरित' और वस्तुपाल ने 'नरनारायणानन्द' और जिनपाल उपाध्यान ने सनत्कुमार चरित, जैसे प्रौढ़ काव्यों की रचना की। इसी प्रकार महाकवि कालिदास के कुमारसम्भव से प्रेरणा ग्रहण कर कवि जयशेखर सूरि ने अपने महाकाव्य 'जैनकुमारसम्भव' का प्रणयन किया।

यह रीतिबद्ध शास्त्रीय महाकाव्यों की रचना के पीछे कालिदास, भारवि, बाण आदि महाकवियों की समकक्षता प्राप्त करने या वैसा ही यश प्राप्त करने या विद्वत्ता प्रदर्शन की भावना दृष्टिगत होती है।

सन्दर्भ सूची

1. जैनकुमारसम्भव–जयशेखर सूरि–प्रस्तावना, पृ0 8
2. धम्मिलकुमार प्रशस्ति– 6–11
3. जैन संस्कृत महाकाव्य –डॉ0 सत्यव्रत, पृ0 22
4. जैन कुमार सम्भव – जयशेखर सूरि– प्रस्तावना, पृ0 9–10
5. जैन साहित्य का इतिहास भाग–6 पार्श्वनाथ विद्यापीठ, बनारस उ0प्र0
6. जैन शिलालेख संग्रह, तृतीय भाग की प्रस्तावना (मा0दि0जै0ग्र0) मुम्बई 1957